Impact Factor 2.147

ISSN 2349-638x

Refereed And Indexed Journal

AAYUSHI INTERNATIONAL INTERDISCIPLINARY RESEARCH JOURNAL (AIIRJ)

Monthly Publish Journal

VOL-III ISSUE-IX Sept. 2016

Address
•Vikram Nagar, Boudhi Chouk, Latur.
•Tq. Latur, Dis. Latur 413512
•(+91) 9922455749, (+91) 9158387437

Email
•aiirjpramod@gmail.com

Website
•www.aiirjournal.com

CHIEF EDITOR – PRAMOD PRAKASHRAO TANDALE

हिन्दी दलित आत्मकथा : कुछ विचार

डॉ शिवानंद एच कोली
हिन्दी अनुवादक
कर्नाटक केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
गुलबर्गा – 585 311

दलित साहित्य के बारे में कहा जाता है कि दलितों द्वारा दलितों के लिए लिखा साहित्य माना जाता है तो कुछ लोगों का मानना है कि जिस साहित्य में शोषितों की जीवन कहानी है वह दलित साहित्य है। दलित साहित्य मानव मुक्ति का साहित्य है, साथ ही यह शास्त्रों से मुक्ति की चेतना का साहित्य है। इस साहित्य में दलितोत्यान की मूल चेतना के साथ–साथ आम आदमी के दुख दर्द उसके सामाजिक सरोकार आदि को नया रूप और चेतना धारणा एवं अभिव्यक्ति करने का विधा हि दलित साहित्य मानता हूँ।

हिन्दी साहित्य के परम्परावादी साहित्यकार हो या कन्नड़, मराठी के दलित लेखकों इन साहित्यकारों में दलितों का दर्द नहीं आ सकता, क्योंकि जिस लदोई (मैली) को सवर्णो के लोग जानवरों को खिलाते थे, वही लदोई श्यौराजसिंह बेचैन जैसे दलितों का भोजन है और जिस जूठन को पशु और कुत्ते, खाते थे उसी जूठन को ओमप्रकाश बाल्मिकी जैसे कितने दलित खाकर आज यहाँ तक पहुँचे है। इस लदोई और जूठन को कितने गैर दलितों ने खाया और लेखक बने है? क्या लदाई और जूठन खाया गैर दलित लिख सकता है। उसी अनुभूति के साथ जिस अनुभूति के साथ भोकता रहे दलित लेखक? जो बात दलित आत्मकथा और अन्य आत्म कथाओं में फर्क करती है, वह यह है कि दलित लेखक स्वयं और अपने परिवार के द्वारा मागें गये यथार्थ के चित्रण करने में नहीं हिचकता। इतना ही नहीं यदि दलित लेखक के परिवार की महिला को मजबूरी वश या भयवश, बलवश अथवा किसी अन्य कारणों से भी शारीरिक और यौन शोषण से झेलना पड़ता है तो वह उसको अपनी आत्मकथा में अपने अनुभव और सोच के अनुसार स्थान देने में नहीं हिचकता। इतना ही नहीं यदि किसी दलित लेखक ने बदलने की भावना या प्रतिक्रिया स्वरूप अथवा आक्रोश होकर सवर्ण की महिला के साथ ऐसा कुछ कर दिया तो वह उसको अपने आत्मकथन में स्यान दे देगा।

छलित की आत्मकथा 'गृहंयच गृहयति' का पालन करते हुए अपने अनुभव और विचारों को ज्यों का त्यों प्रकट करता है। परन्तु दलित के अतिरिक्त अन्य आत्मकथाकारों में इतना साहस देखने को नहीं मिलता है कि वह इन दोनों परिस्थितियों या कारनामों को न छुपाए। ''दलित आत्मकथा इस लिए खरा उतरते है, उनमें, लागलपेट के सहारे इसे कलात्मक के आवरण में लपेटकर अविश्वसनीय नहीं बनाया जाता है। मराठी साहित्य के समांतर हिन्दी साहित्य में भी पिछले वर्षो में कुछ दलित आत्मकथाऐं आई है और इन्होंने साहित्य की जड़ता को अपने ढंग से तोडा है हिन्दी दलित साहित्य के क्षेत्र में भी भगवान दास ने ''मैं भंगी हूँ'' नाम से एक भंगी मेहतर जाति के इतिहास से संबंधित समाज की आत्मकथा लिखी थी। यह संभवता सन 1950 के दशक के प्रकाशित हुई थी। आत्मकथा विधा में दलित साहित्य की यह पहली रचना थी जिसमें एक आत्मविस्मृति दलित जाति के इतिहास का गंभीर गवेषण मिलता है। इसके काफी समय बाद हिन्दी दलित साहित्य में व्यक्तिगत आत्मकथा के लेखन का परंपरा शुरू हुआ। 9 वे दशक में हिन्दी दलित आत्मकथा लिखने की शुरूवात पत्रकार राजकिशोर द्वारा सम्पादित 'हरिजन से दलित में दलित लेखक ओमप्रकाश बाल्मिकी का आत्मकथा से मानी जा सकती है हिन्दी पाठकों व साहित्यकारों में दलित आत्मकथाओं के प्रति रूझान बढ़ी है और यह साहित्य की प्रमुख विधा बन गयी है। इसी की प्रेरणा स्वरूप 1995 में मोहनदास नैमिशराय की आत्मकथा अपने –अपने पिजंरे दूसरी आत्मकथा ओमप्रकाश बाल्मिकी की जूठन 1996 में प्रकाशि हुई। मोहनदास नैमिशराय और ओमप्रकाश बाल्मिकी की आत्मकथाऐं इनमें प्रमुख है। सूरजपाल चौहान द्वारा लिखित तिरस्कृत और कौसल्या

बैसमी जी का ''दोहरा अभिशाप और डी आर जाटव कृत 'मेरा सफर मेरी मंजिल और श्यौराज सिंह बेचैन द्वारा 'मेरे बचपन मेरे कन्धोर आदि दलित आत्मकथाऐं हम देख सकते है।

दलित साहित्य और साहित्यकारों के सामने आज ऐसे चुनौतियां है अभी बहुत सारे अवरोधों को उन्हें तोडना शेष है। अपनी अस्मिता को सशक्तता से स्थापित करना है तथा आनेवाली पीढी को एक दिशा भी देनी है। अतः छोटे–मोटे दुराग्रहों से बचते हुए पूरी सामूहिकता और सहयोगवृत्ति के साथ इस आन्दोलन को उन्हें सिद्ध से जितनी जल्दी वे मुक्त हो जाएं उतनी ही समरसता आएगी।

दलित लेखकों को दया से घृणा है। उन्हें दया और सहानुभूति नहीं अधिकार चाहिए। आत्म सम्मान और अस्मिता की पदचाप मराठी और अन्य भाषा साहित्य के साथ–साथ नकार, वेदना और आक्रोश के रूप में दलित साहित्य में अभिव्यक्त हो रही है।

तिरस्कृत आत्मकथन में सूरजपाल चौहान अपने जीवन की ऐसी असंख्य घटनाओं को पाठक के सामने रखते है कि जिन्हें पढ़कर पत्थर दिल इंसान भी पिघल जाता है। आत्मकथाकर अपने जीवन की एक घटनाओं को खोलते हुए आगे बढ़ता है। इन घटनाओं पाठक को सामने रखने के लिए हिम्मत और पर्याप्त बेवाकीपन जो चाहिए वह पूर्ण रूप से सूरजपाल चौहान हम देख सकते है। लेखक जैसे–जैसे अपने पारिवारिक जीवन के गहरे पानी में उतरता है, भ्रमित होता हुआ दिखाई देता है। पाठक की समझ में यह नहीं आता है कि आखिर आत्मकथाकार अपने परिवार के गुप्त रहस्यों को पाठकों के सामने प्रस्तुत कर साबित करना चाहता है? पत्नी की बेवाफाई को पाठकों के सामने लाकर वह दलित विद्यार्थी एवं बौद्धिक वर्ग को क्या संदेश देना चाहता है वही बात ''जूठन'' के लेखक ओमप्रकाश बाल्मिकी में भी है आत्मकथाकार ''जूठन'' के अंत तक जाते–जाते बिखरता हुआ दिखाई देता है, उसके पैर लडखड़ाने लगते हैं। आत्मकथा के अंत तक में उन्हें एक 'स्पार्क' देना चाहिए या जो दलित पाठक एवं युवा पीढ़ी के लिए प्रेरणादायी हो पर ऐसा नहीं होता अपने जीवन कथा कहता हुआ लेखक अपनी दलित ऊर्जा को समाप्त करता हुआ देख सकते है। ललित परमार की आत्मकथा चाहे आत्मकथा के प्रारूप में खरी न उतरती हो किन्तु उनके लेखन के पीछे एक दृष्टि है निश्चित उद्देश्य और संदेश है। इसी तरह कन्नड़ के प्रगतिवादी एवं दलित साहित्यकार प्रो एच टी पोते एवं शिवरूद्र कल्लेलकर जी द्वारा लिखित होलगेरी राजकुमार तथा चम्माउगे कृतियाँ आत्मकथात्मक शैली में लिखी हुई उपन्यास तथा कहानी संग्रह दलित चेतना के साथ अपने सामाजिक संगतियों तथा दलित वर्ग को प्रगति पथ पर लेकर जाने में मजबूर बनाते है दलित युवा वर्ग को आगे बड़ने के लिए दिशा एवं मार्गसूचिक के रूप में उबरकर आते है।

'मेरा सफर मेरी मंजिल का लेखक भी कुछ इसी प्रकार बिखरता नजर आता है। आत्मकथाकार जाटव एक–एक ईट बड़ी सिद्धत से रखते है और अपने जीवन के सफर में प्रत्येक डगर पर संभल–संभल कर चलते है। बडी से बड़ी मुश्किल के सामने भी वह घुटने नहीं टेकते। ' अपने–अपने पिंजरे के लेखक मोहनदास अपनी आत्मकथा में अपने प्रणय प्रसंगों की भरमार खडी कर देते हैं। इन प्रणय के सिवा आत्मश्लाध्य के कुछ प्रसंगों से अगर मोहनदास बचे होते तो भी पाठक का रूचि भंग थोड़ा बहुत कम हो सकता था। इसी तरह 'गवरमेंट ब्राहम्ण' कन्नड का एक प्रमुख आत्मकथा है, प्रो अरंबिद मालागत्ति जी द्वारा लिखी गयी है। इसमें भी आत्मकथा कार अपना प्रणय प्रसंग तथा बल्यकाल में अनुभवित सच्चाई को पाठक के सामने रखा है।

झोपड़ी से राजभवन में माताप्रसाद एक निश्चित दिशा में गति करते हुए दलितों में चमार जाति का इतिहास और राजनीति के अखाड़े के अंतर्गत राजनीतिक प्रसंगों के विवरण पाठक को दिशा देने में व्यवधान पैदा करते है।

''तिरस्कृत आत्मकथा में आत्मकथाकार सूरजपाल चौहान की सपाट बयानी लगती है। इसके बाद आत्मकरण के दूसरा बाग संतप्त भी इसी बात को दोहराता हैं।

इस तरह हिन्दी को कन्नड़ आत्मकचनों में स्वय भोगी हुई सत्य को पाठक के सामने रखते हुए। हिन्दी दलित आत्मककथा को साहित्य समृद्ध बनाया है।